[Conference-Composition of Colours :December,2014] ISSN- 2350-0530
DOI: https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v2.i3SE.2014.3621

INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

मध्यप्रदेश के जनजातियों के जीवन में रंगों का महत्त्व

विजय कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर,
ड्राइंग एण्ड पेन्टिंग डिपार्टमेन्ट, दयालबाग़ एजूकेशनल इंस्टीट्यूट, दयालबाग, आगरा

रंग सदैव उत्साहवर्धन करते हैं, रंगों का प्राकृतिक गुण ही प्रकाश की किरणें होती हैं, जो अपनी तरंगदैर्ध्य से प्रकृति में व्याप्त जीवों और प्राणियों के अन्तर्मन के कंपन को ऊर्जा में परिवर्तित करती है। रंग–स्वाद हीन होते हैं, फिर भी प्राणी अपने अनुभव से रंग–स्वाद की अनुभूति करता है। जिसका प्रभाव उसके जीवन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जीवन, मनुष्य को अपने कर्म के अनुसार जीने की कला भी प्रदान करता है, कर्म का सीधा सम्पर्क कला से है। कला को मनुष्य के जीवन के रूप में परिभाषित करें तो यह तथ्य आता है, जो गतिमान हो और मानसिक रूप से उद्वेलित करें। मनुष्य शारीरिक रूप से नश्वर होता है, आत्मा को अमर माना जाता रहा है। आत्मा का रूप, रंग दृष्टिहीन होता है, लेकिन मनुष्य कला के माध्यम से इसे दृष्टिगत रूप देने में सक्षम होता है। रंग और रूप ऐसा माध्यम है, जिसके द्वारा मनुष्य अपनी अभिव्यक्ति दूसरे प्राणियों तक पहुंचाने में सामर्थ्यशाली होता है। रूप को मनुष्य भिन्न–भिन्न तरह से दृष्टिगत रूप देता है, परन्तु इसमें रंग संयोजन का प्रयोग कर, इसे ऊर्जावान बनाता है।

चित्र सं.–1–सर्वेक्षण के दौरान भील कलाकार लाड़ो बाई ताहेड़ से वार्ता

वैसे तो प्रकृति में व्याप्त खनिज पदार्थ आदि तत्वों से रंगों का संयोजन किया जाता है, लेकिन इसका विस्तृत प्रयोग आदिम जन समूह द्वारा किया गया जो जंगलों में निवास करते थे। वर्तमान समय में आदिम जन के पूर्वज भारत में 'जनजाति' के नाम से अभिहीत किये जाते हैं। जो विस्तृत जनसंख्या में मध्यप्रदेश में निवास करते हैं। मध्यप्रदेश के जनजातीय समूह रंगों को अपने जीवन में मंगलकामना के रूप में प्रयोग करते हैं। मध्य पाषाण तथा नव पाषाण काल के मानव द्वारा लाल तथा पीले लौह अयस्कों से बनाये गये, ये चित्र बड़ी संख्या में मध्यप्रदेश के निकट भीमबैठका नामक स्थान तथा देश के अनेक भागों में मिलते हैं। भित्ति चित्रों से लेकर, मानव शरीर के पैर के उँगलियों से सिर तक रंगों का उल्लासमय और मांगलिक शकुन के लिए प्रयोग में लेते हैं।

हमारे देश में सदियों से घर की दिवारें और फर्श वह कैनवास रहे हैं, जिन पर स्त्रियाँ नाना प्रकार की इबारतों में इबादत लिखती आई हैं। घर चाहे मिट्टी, घास–फूस का ही क्यों न हो पर वह एक समूचा संसार है, जिसे आँधी–पानी, रोग–शोक, दुनिया जहान की बुरी नजर, कोप, भूख–प्यास से घर की स्त्री को बचाना है। कोई चित्र न बनाया गया हो, उस अवस्था में भी कम से कम मिट्टी की एक मोटी उभरी हुई रेखा अथवा काले अथवा लाल रंग की रेखा पूरे घर की किलेबन्दी अवश्य करती है। कभी बादलों को न्योतने के लिए फर्श पर ऐपण बनाये जाते हैं तो इस अनुरोध से कि बस बहुत हुआ अब दूसरे देस पधारों। लक्ष्मी की अन्न के रूप में विविध छवियाँ दीवारों पर बनती हैं। इसके अलावा पेड़, बेल–बूटे, पशु–पक्षी, सर्प आदि समस्त चराचर में परस्पर सौहार्द्र और लय की कामना भी घर की दीवारों में किये जाने वाले चित्रांकनों में जगह पाती है।

चित्र सं.–2–जनजातीय समुदाय का घर

वैसे जनजातियों के टोना–टोटका में रंगो को विशेष महत्व दिया जाता है। जैसी प्रथा होती है, वैसा ही रंग का गुण होता है। वैसे भी टोना–टोटका जनजातियों में लोकोपचार या लोकोपाय का समर्थन करता है, जिसका समय–समय पर उपयोग करते रहते हैं। मध्यप्रदेश की जनजातियों में गाँव में बीमारी फैलाने वाली दुष्टात्मा– हरखी अथवा चुड़िन की आकृति लाल व काले रंगों से घर की बाहरी दीवार पर कई अवसरों पर बनाई जाती है।

जनजातियों के घर अधिकतर मिट्टी के होते हैं, फिर भी इसे गोबर से लीप कर, रामरज (पीली मिट्टी), गेरू (लाल मिट्टी), छुई (सफेद मिट्टी) का घोल बनाकर, उस पर मोर–पपीहा, फूल–पत्ती, चन्दा–सूरज, चक्र, चिरैयाँ, पुतरियाँ आदि बनाये जाते हैं। इसमें चन्दा–सूरज, कछुआ बहुत महत्वपूर्ण हैं। कछुआ दृढ़ इच्छा शक्ति और धैर्य का प्रतीक है। कछुआ का चित्रण पृथ्वी की उत्पत्ति के साथ हुआ है। साथ ही जनजातियों में हाथ की अंगुलियों के ठप्पे देकर दीवार पर जो चित्र उकेरा जाता है, वह

INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

'थापा' कहलाता है। थापों के साथ जो व्रत–कहानियाँ, पूजा–अनुष्ठान, फलदायिनी मंगल भावनाएँ और विश्वास मनौतियाँ जुड़ी हुई होती है। थापों में विविध रंगों का प्रयोग, उनकी कलात्मकता तथा अंकन की बारीकी प्रमुख होती है। थापों में बेल–बूटे, फूल–पत्तियाँ, बिन्दियों का प्रयोग होता है। गोबर के साथ रंग– सिन्दूर, हिंगलू, कुंकम, हरा, नीला, आसमानी, काला, पीला व मेंहदी, काजल, हल्दी, गेरू, ऐपण आदि भी प्रयोग किये जाते है। ये रंग उपकरण शुभ मागंलिक और विघ्नों के नाश करने वाले माने जाते हैं, जैसे– लाल रंग शक्ति और सौभाग्य का प्रतीक है। हनुमान जी के ऊपर चढ़ा सिन्दूर (मली–मली) लोग अपने सिर की चोटी पर लगाते हैं तथा लाल रंग का लंगोट भी पहनते हैं। कंकू (कुमकुम) बड़ा मागंलिक माना जाता है। बाल जन्म से लेकर मरण तक के प्रत्येक संस्कार में इसका प्रयोग किया है। पीला रंग भी बड़ा शुभ माना जाता है। वैवाहिक जीवन में प्रवेश करने को 'हाथ पीले करना' कहा जाता है।

चित्र सं.–3–जनजातीय थापा चित्र

भागोरिया भील आदिवासी के द्वारा मनाया जाने वाला एक विशेष पर्व है। इसे 'प्रणय और परिणय' पर्व के रूप में भी जाना जाता है। भागोरिया मेले में भील युवाओं की मौज–मस्ती देखने योग्य होती है। भागोरिया मेले में खास भीली शैली में धोती लपेट कर उस पर रंग–बिरंगी झुलड़ी (बंडी) पहनकर, माथे पर साफा बाँध कर और उसमे कंलगी खोंस कर, मुँह और होंठ पान रंग कर विशेष सज्जा के साथ भील युवकों के झुण्ड के झुण्ड मेले में आते हैं। आँखों में सुरमें भी लगाते हैं। पगड़ी में खोंसी गई कलगी इस बात की प्रतीक होती है कि वह युवक अविवाहित है और विवाह हेतु उम्मीदवार है। मनपसंद जीवन साथी प्राप्त होने की उम्मीद और उत्साह में भील युवतियाँ भी खूब सज–धज कर आती हैं। रंग–बिरंगा छींट घेरदार लहंगा वे काँछ लगाकर इस प्रकार पहनती हैं कि घुटनों के नीचे के पैर प्रायः खुले रहते हैं। घाघरे के साथ वे शरीर के ऊपरी भाग पर रंग–बिरंगी और विशेष रूप से बनाई गयी कांचुली पहनती है। भीलों के भित्ति चित्र भी अपनी विशेषताओं से आकर्षित करते हैं। इस सन्दर्भ में पिथौरा–पर्व उल्लेखनीय है। इस पर्व पर बनाये जाने वाला चित्र भीलों की पिथौरा शैली के रूप में भी प्रतिष्ठित हो चुका है। पिथौरा बन जाने के बाद रात्रि में नृत्य–गायन होता है और समुदाय को भोजन के लिए आमंत्रित किया जाता है।

चित्र सं.–4–जनजातीय युवक

चित्र सं.–5– पिथौरा भित्ति चित्र में रंगों का

मध्यप्रदेश की जनजातियाँ कार्तिक माह के दीपावली पर्व पर व्रत रखती है, और इस पर्व पर घरों में 'सुरैती' या 'सुरामती' बनाने का प्रचलन है। गेरू, सिन्दूर, हल्दी, चूना, चावल की लेप आदि से लक्ष्मी–गणेश के चित्र बनाकर उन्हें पूजा जाता है। दीपावली से एक रात पहले भी छोटी दीपावली को स्त्रियाँ दीपक को चावल से रंग कर पूजती हैं। इसी माह में पालतू पशुओं को गोहातों में पूजा जाता है। गाय–बैलों के शरीरों पर चटक लाल, पीले और हरे रंग के चित्र बनाकर किसान प्रफुल्लित होते हैं। इस दिन पशुओं को नहलाकर नयी रस्सीयों में बाँधा जाता है। परिवार की बेटियाँ गोबर से आँगन को लीपकर गोबर से साँड़, गाय, भैंस, बैल आदि की स्पष्ट मूर्तियाँ बनाती है। खलिहान बनाकर आटे और रंग से चौक पूरती है। अन्नागार बनाकर उनमें गेहूँ–चावल, रखे जाते हैं। सब्जियों के फूलों से उन्हें सजाया जाता है। इस पर्व को धन–धान्य से पूर्ण करने का प्रतीक माना जाता है। पूजा के बाद बेटिओं को उपहार देने की भी परम्परा है।

INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

यहाँ की जनजातियाँ नागपंचमी के शुभ अवसर पर नाग देवता की पूजा करते है और गेरू के रंग से या शुद्ध गोबर से दीवार या भींत (भित्ति) पर नाग देवता का चित्र अंकित करते हैं। एक वर्गाकार चौहद्दी में नागपंचमी की आकृति बनाकर उसके पेट में पाँच या सात नागों के चित्र लिखे जाते हैं और दूध के नैवेध से उनकी पूजा होती है। साथ ही एक कथा भी कहीं जाती है। जनजातियों में शुभ अवसरों पर चौक पूरने की प्रथा है। वैसे चौक पूरने की प्रथा सभी वर्गों में प्रचलित है, साथ ही भारत के कोने–कोने में भी इसका चलन है। चौक पूरने में पीला रंग शुभ माना जाता है, इसके लिए हल्दी के साथ एपन (पिसा हुआ चावल के आटे का घोल) से गोबर शुद्ध किये या लिपी हुई भूमि पर बनाया जाता है। चौक में सातिया (स्वस्तिक), त्रिकोण, पूर्ण कुम्भ, बिन्दु आदि का प्रयोग करते हैं। जो ब्रह्मा, विष्णु, महेश की भूमिका में होते हैं। यह सभी प्रतीकात्मक रूप में दर्शित होते हैं। ऐसा माना जाता है कि देवता हमारे लिए शुभ करते हैं, जो सृष्टि की रक्षा के साथ अशुभ का संहार करते हैं। चौक में अथवा चतेउर और लोकचित्रों में प्रयुक्त रंगों के भी प्रतीकार्थ होते हैं, जिन्हें लोक चित्रकार जानकर ही चौक या लोकचित्र पूरता या लिखता है। मोटे तौर पर सफेद रंग सत्व का, लाल रंग रजस और काला तमस का प्रतीक होता है। लाल रंग अग्नि और सूरज की ऊष्मा में व्याप्त होने से ओज और प्राणशक्ति का द्योतक है। पीला पराग से मिलता–जुलता है, इसलिए फूल के गुणों को दर्शाता है। नीला रंग आकाश का होने से व्यापक और सुखद है। हरा रंग प्रकृति में व्याप्त है, इस कारण समृद्धि और हार्दिक आनन्द का प्रतीक है। पीले और लाल रंगों के मिश्रण से बना नारंगी रंग वैराग्य का द्योतक है, जबकि लाल और नीले के मिश्रण होने से बना बैंगनी रजस दर्शाता है। सूर्य और मंगल ग्रहों का रंग लाल, बुध का हरा, वृहस्पति का पीला, शुक्र और चन्द्र का सफेद तथा शनि, राहु और केतु का रंग काला है। इस प्रकार नवग्रहों की रंग–योजना पारम्परित है।

वर्तमान में मध्यप्रदेश की लगभग सभी जनजातियाँ अपनी–अपनी चित्र सृजना से व्यक्तिगत तौर पर स्थान बनाये हुये हैं। लगभग सभी की अपनी विशिष्ट शैली भी सृजित हो चुकी है, भील, गोण्ड, कोरकू इस पथ पर अग्रणी है। देवी–देवताओं, मिथ कथाओं, किवदन्तियों तथा टोना–टोटकों पर आधारित चित्र जीवन्त प्रतीत होते हैं, मानो किसी अदृश्य शक्ति से स्पंदित हो। प्रत्येक कलाकार इन आकृतियों को किसी न किसी तरह के टेक्चर (पोत), मसलन, बुन्दकियाँ, साँकल, ऋण या धन का चिन्ह आदि से भर देता है, जिनमें प्रायः कई रंगों का प्रयोग होता है। इन बुन्दकियों आदि के प्रयोग से चित्र में एक लयात्मक प्रवाह की सर्जना होती है। प्रत्येक कलाकार चूँकि अलग–अलग पहचाना जा सकता है। बड़ा देव, खप्पड़ धारी माता, ठाकुर देव, धरती की उत्पति कथा, बासिन कन्या की उत्पति कथा आदि के अलावा जंगल से जुड़े दृश्यों, अनेक प्रकार के पक्षी, जानवर, पेड़ आदि जनजातियों के चित्रों के प्रमुख विषय है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 *उपाध्याय एवं शर्मा–भारत में जनजातिय संस्कृति, मध्यप्रदेश ग्रन्थ अकादमी, भोपाल*
2 *कुमार, एस.–आदिवासी संस्कृति एवं राजनीति, विश्व भारती पब्लिकेशन्स नई दिल्ली–2009*
3 *गुप्ता, मंजु–जनजातियों का सामाजिक–आर्थिक उत्थान, अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली–2010*
4 *गुप्ता, रमणिका–आदिवासी लोक भाग 1 व 2 शिल्पायन दिल्ली–2006*
5 *गुप्ता, रमणिका–आदिवासी विकास से विस्थापन, राधाकृष्ण नई दिल्ली पटना, इलाहाबाद–2008*
6 *चौमासा– अंक– 59, 88, 89 मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद, भोपाल*
7 *जोशी, रामशरण–आदिवासी समाज और शिक्षा, ग्रन्थ शिल्पी नई दिल्ली–1996*
8 *जैन, नेमीचन्द–भील भाषा साहित्य और संस्कृति, हीरा भैया प्रकाशन इंदौर–1994*
9 *तिवारी, राकेशकुमार –आदिवासी समाज में आर्थिक परिवर्तन, नार्दन बुक सेन्टर नई दिल्ली–1990*
10 *तिवारी, शिवकुमार एवं शर्मा, डॉ. श्री कमल–मध्यप्रदेश की जनजातियाँ समाज एवं व्यवस्था मध्यप्रदेश, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल–1975*
11 *निरगुणे, वसन्त एवं गेहलोत, भानुशंकर–पिठौरा, आदिवासी लोककला एवं तुलसी साहित्य अकादमी, मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद–2011*
12 *पाटिल, अशोक डी.–भील जनजीवन और संस्कृति, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल–1998*
13 *पाठक, शोमनाथ–भीलों के बीच बीस वर्ष, प्रभात प्रकाशन दिल्ली*
14 *भावसार, वीरबाला–आदिवासी कला, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, नवम्बर–1993*
15 *वर्मा, एम.एल.–भीलों की सामाजिक व्यवस्था, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी.नई दिल्ली–1992*
16 *व्यास, नरेन्द्र एन. एवं भानावत, डॉ. महेन्द्र –आदिवासी जीवनधारा हिमांशु पब्लिकेशन–2008*
17 *वैष्णव, टी. के.–मध्यप्रदेश की अनुसूचित जनजातियाँ, आदिम जाति अनुसंधान एवं विकास संस्था, भोपाल, मध्यप्रदेश*
18 *शुक्ल, हीरालाल–आदिवासी आदिवासी अस्मिता और विकास मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल–1997*
19 *सम्पदा–आदिवासी लोक कला एवं तुलसी साहित्य भोपाल–2010*
20 *सिंह, के.एस.–हमारी आदिवासी विरासत, दि नेशनल ट्राइबल फेस्टिबल,राँची, अक्टूबर–1989*
21 *सिंह, रामराज–आदिवासी अर्थव्यवस्था के सांस्कृतिक आधार–बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी पटना, नवम्बर 1976*